नृशंसता का वहशी खेल

आसान नहीं है
किसी बच्चे की मौत का
दुख बर्दाश्त कर लेना
और अनदेखे सपनों की पिटारी को
डेढ़ हाथ की कब्र में
दफना आना

❑ शरद कोकास

मई, 1998 के शुरूआती दो सप्ताहों में राजस्थान के पोखरण कस्बे से संबंधित दो खबरें अखबारों में आयीं । इनमें से एक खबर तो आज भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा और उद्वेलन का मुद्दा है जबकि दूसरी खबर पर प्रदेश में ही कोई बात तक नहीं हुई । परमाणु-विस्फोटों की परीक्षण-शृंखला से ठीक 10 दिन पूर्व प्रदेश (राजस्थान) के एक दैनिक समाचार पत्र ने यह रहस्योद्घाटन किया था कि अरब देशों में ऊंट-दौड़ के वहशी खेल के लिए पश्चिमी राजस्थान से बच्चे भेजने का सिलसिला थमा नहीं है । यह खोजी-खबर दैनिक की दो किश्तों में छपी, जिसका कोई अधिकारिक खंडन नहीं किया गया था । लेकिन इस पर मानव अधिकार समर्थक और बाल-शोषण विरोधी संगठनों, संस्थाओं अथवा इनके प्रवक्ताओं की ओर से प्रतिवाद की भी कोई आवाज नहीं उठी थी । अलबत्ता दैनिक के कुछ संवेदनशील पाठकों ने चिट्ठियों की मार्फत अपना विरोधी-स्वर उठाया था जो तदनन्तर परमाणु-बम के धमाकों की आवाज में दब गया।

यह पोखरण-क्षेत्र का अंधेरा पहलू है । अब से आठ-नौ बरस पूर्व पहली बार यह तथ्य राष्ट्रीय स्तर पर उद्घाटित हुआ था कि पश्चिमी राजस्थान से छोटे बच्चे अरब देशों की नृशंस ऊंट-दौड़ के लिए भेजे जाते हैं । इन छोटे बच्चों को 'लिचका' पहनाकर ऊंट पर बांध दिया जाता । ऊंट के दौड़ने पर बच्चे द्वारा की जाने वाली चीख-पुकार से अरब शेख अपना वहशी मनोरंजन करते । अनेक बच्चे इस नृशंस दौड़ में मौत के शिकार हो जाते । उस समय इस वाकये पर तीव्र प्रतिक्रिया हुई और खाड़ी देशों में बाल-क्रूरता के विरुद्ध कई अन्तर्राष्ट्रीय संगठन सक्रिय हो गये ।

यह एक विडम्बना है कि अन्तराष्ट्रीय मानक 'बचपन' को वजन तौलकर जांचते हैं । हुआ यह कि खाड़ी देशों की सरकारों ने दौड़ में ऊंट सवार के वजन की सीमा जो पहले 15 से 20 किलो थी, उसे बढ़ाकर 20 से 35 किलो तक कर दिया । फलत: छोटे बच्चों की जगह किशोर वय बच्चे वहां जाने लगे । दैनिक के अनुसार करीब 150 बच्चे अरब शेखों के परपीड़ाकारी मन बहलाव की साधन नृशंस ऊंट-दौड़ में भाग लेकर आ चुके हैं, जबकि एक दर्जन किशोरवय बच्चे अभी भी वहीं हैं । लौटकर आये कई बच्चे शारीरिक विकलांगता के शिकार हुए हैं , वहीं कुछ अन्य बच्चे इस खौफजदा अनुभव से उपजे मानसिक आघात के शिकार हैं । कुछ बच्चे तो अर्धविक्षिप्त की तरह हो गये और कुछ की याददाश्त काफी कम हो गयी। कुछ तुतलाने व हकलाने लगे । वे गुमसुम व अनमने रहते हैं ।

दुनियां जब 21 वीं सदी के प्रवेश-द्वार पर खड़ी है और सारा भू-मंडल एक 'विश्व-ग्राम में तब्दील हो चुका है तो यह कैसी विडम्बना है कि इस 'ग्राम' के एक हल्के के 'बूढ़े शेख' दूसरे हल्के के 'मासूम बच्चों' की यंत्रणा से अपना मन बहलाते हैं । इस प्रसंग में मध्यकालीन रोमन-साम्राज्य के अनेक नृशंस

रिवाजों में से एक रिवाज याद आता है जिसमें युद्ध में पराजित सैनिक-बंदियों का द्वन्द्व-युद्ध कराया जाता था । दो कैदियों के इस द्वन्द्व-युद्ध को देखने के लिए रोमन-शासकों और उसके सिपहसालारों से स्टेडियम भर जाता था । दोनों कैदियों को यह कह कर तलवारें थमा दी जाती थीं कि जो दूसरे को मार देगा, उसे मुक्त कर दिया जायेगा। और 'मेरे जीवन के लिए तेरी मृत्यु जरूरी है' इस भावना से छिड़े खूनी संघर्ष पर रोमन खुशी से तालियां बजाते थे । आखिर एक ईसाई संत ने इस वहशी खेल का प्रतिरोध किया। वह लड़ते कैदियों के बीच कूद पड़ा और दोनों योद्धाओं की तलवारों का शिकार बना । लेकिन उसकी शहादत ने इस वहशी खेल का अंत करवा दिया। रोमन अपने साम्राज्य को गौरवशाली मानते थे जिसे आधुनिक इतिहास ने 'अंधकार के युग' का दर्जा दिया है ।

हमने 'अंधकार के युग' के इस रिवाज का जिक्र सरल तुलना के लिए नहीं किया है । बच्चे की युद्ध में पराजित सैनिक कैदियों से कैसी तुलना ? बच्चा तो जीवनयापन के लिए रोजमर्रा की जाने वाली लड़ाई में टूट चुके अपने पिता की इच्छा का कैदी है जो प्रलोभन के आगे पराजित हो गया है । इन बच्चों ने तो अभी ठीक से जीना भी नहीं शुरु किया था। दलाल कहता है कि वहां तुम्हारा बच्चा ऊंट चरायेगा और खूब पैसा कमायेगा। यदि दौड़ में ऊंट से गिरकर बच्चे के मर जाने का डर दिखाया जाये तो भी परास्त पिता दीर्घ नि:श्वास लेकर कहेगा, ''मरा तो हमारा गया, उनका क्या गया?'' और अंत में बच्चे को भेजने का निर्णय कर वह खुद को ढांढ़स बंधा लेगा ''मौत तो यहां भी आ सकती है ।''

बेबसी से बंधे बच्चों का साबका एक ऐसी स्त्री से होता है जो दस हजार रुपयों के लिए उनकी (नकली) मां बन जाती है और उन्हें खाड़ी देशों में छोड़कर वापस आ जाती है । यह गरीबी से दौलत का सौदा है जिसमें मासूमियत, पितृत्व और ममत्व की बलि चढ़ जाती है । आखिर अरब जगत किस संस्कृति में जी रहा है ? मध्यकालीन नृशंसता ने वहां नये रूपाकार ग्रहण कर लिए हैं । लेकिन यह रोमन मध्यकालीन जीवन-विरोधी मानसिकता का कहीं अधिक जघन्य रूप है । पैट्रो डालर ने रक्त-रंजित और घिनौनी जीवन-शैली पर अपनी चकाचौंध का आवरण डाल दिया है ।

रोमन दास यहां भारत, बंगला देश और नेपाल से आयी घरेलू नौकरानियों के रूप में संरक्षित हैं जिनके यौन-शोषण और अमानवीय यातनाएं दिये जाने की खबरें आए दिन मिलती हैं । बाल-वेश्यावृत्ति और बच्चियों की खरीद-फरोख्त अरब-शेखों का प्रिय शगल है । उस पर बच्चों को खरीदकर उन्हें ऐसी यातना देने का प्रस्तुत प्रसंग ।

पोखरण के प्रस्तुत प्रसंग पर हम गर्व करने जा रहे हैं अथवा शर्म ? अमेरिका और उसके 'सात बड़े' मित्रों के पास क्या इस मुतल्लिक खाड़ी देशों पर किसी प्रतिबंध का कोई प्रावधान है अथवा वह 'तेल की ताकत तले' कुछ भी कर पाने में समर्थ नहीं ? जो भी हो । यह तो नहीं कहा जा सकता कि खाड़ी देशों में मनुष्य से होने वाले अमानवीय सुलूक पर विश्व के मानव-अधिकार संगठन निष्क्रिय या मौन हैं। किन्तु ऊंट-दौड़ में बच्चों को भेजे जाने का सिलसिला बरकरार होने पर प्रदेश के जिम्मेदार लोगों की चुप्पी खतरनाक है । सबसे पहले और सबसे ऊंची आवाज में तो प्रतिवादी स्वर यहीं से उठना चाहिये था ऐसा क्यों नहीं हुआ ? क्या यह सवाल बेमानी है जो अनुत्तरित ही रह जायेगा ?

जहां प्रश्न परकटे परिन्दे की तरह फड़फड़ाते हों
वहां निश्चिंत/खामोश अपनी आंखों में चांद बसाए
यह कैसा नगर है ?
कैसे लोग हैं ?

❑ **सत्येन्द्र कुमार** ◆